कपड़े पर करिश्मा बुनने की कारीगरी है यहां की जरी जरदोजी

अब बरेली का सुई-धागा गिरा परदेसी बाजार में

जरी जरदोजी पारंपरिक भारतीय कढ़ाई की शैली है। इसमें विशेष प्रकार की सुई और धागे का इस्तेमाल किया जाता है। सोने और चांदी के धागों का उपयोग करके कपड़ों पर आकर्षक फूल, पत्तियां, या जटिल ज्यामितीय डिजाइन बनाई जाती हैं, जो परिधान को चमकदार और शानदार लुक देती हैं।

जरी जरदोजी में कीमती पत्थरों और मोतियों का भी उपयोग किया जाता है। इस कढ़ाई से तैयार परिधानों का प्रयोग अमीर वर्ग द्वारा अधिक किया जाता है। शादियों और फैशन शो में काफी मांग रहती है। वास्तव में जरदोजी फारसी शब्द है। जो 'जरी' और 'दोजी' से मिलकर बना है। 'जरी' का मतलब सोना और 'दोजी'का आशय कढ़ाई से है। इस तरह यह शब्द 'सोने की कढ़ाई'के लिए है। शायद इसीलिए जरी का काम पहले सोने-चांदी के तारों, छोटे मोती, नगीनों व रत्नों से ही होता था। राजा-महाराजाओं के कपड़े जरदोजी के होते थे। अब सिल्क, शाटन, वेलवेट पर मेटल की एंब्रॉइडरी होती है। साड़ी, लहंगे, दुपट्टे, सूट, बैग पर सुनहरे धागे, सलमा, सितारे, मोती, कटदाना, दबका का प्रयोग होने से उनकी रंगत बदल जाती है।

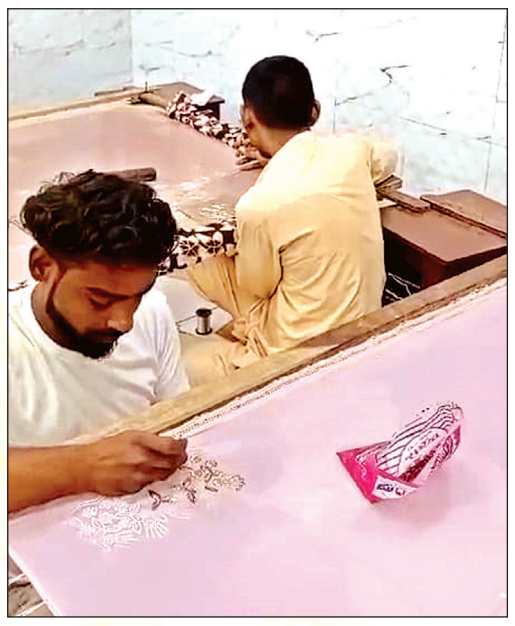

मुगल काल से मौजूद कला देश-दुनिया में लोग दीवाने

- बरेली में जरी कारोबार मुगल काल से हो रहा है। देश-विदेश में यहां की कारीगरी के लोग दीवाने हैं। शहर के जगतपुर मोहल्ले की गली में एक टिन शेड के नीचे चारपाई नुमा चौखटे पर पांच-छह लोग पूरी तल्लीनता से एक साड़ी पर कुछ गोदते दिखते हैं, पूछने पर बताया कि जरी जरदोजी के कारीगर हैं। यह लोग साड़ी पर जरी की कढ़ाई कर रहे थे। कुछ पूछने से पहले बुजुर्ग कारीगर बोल उठते हैं, मियां...अब इस कारोबार के हालात कुछ सुधरे हैं, वर्ना 15 साल पहले तमाम साथी पलायन कर गए। ट्रांसपोर्ट की व्यवस्था सुधरने से काम बढ़ा है।
- बरेली के जरी परिधानों की धूम दिल्ली, जयपुर, हैदराबाद और पंजाब में ज्यादा है। जिले के फहगंज पश्चिमी, नवाबगंज समेत शहर के एजाज नगर गौटिया, सक्लैन नगर, हजियापुर, घेर जाफर खां और सैलानी में बड़ी संख्या में जरी के कारखाने हैं। इनमें पुरुष-महिला कारीगर काम करते हैं।

इस तरह किया जाता कपड़े पर जरी का काम

- जिस कपड़े पर जरदोजी होनी है, उसे कढ़ाई के लिए लकड़ी के एक फ्रेम में फिट करते हैं। इसे अड्डा कहा जाता है। कढ़ाई हुक जैसी नोक वाले सुई या अरी से होती है। हर दाना, मोती, कटदाना, सलमा, सितारा, बड़ी महीन कारीगरी से लगाए जाते हैं।

साड़ी में चार चांद लगा देती कढ़ाई

- सामान्य साड़ी पर जारी जरदोजी से चार चांद लग जाते हैं। सूट पर भी कढ़ाई का काम महिलाओं को लुभाता है। बरेली के बुने सूट दुबई, लंदन, ऑस्ट्रेलिया तक निर्यात होते हैं।

700 करोड़ से ज्यादा का सालना कारोबार

- कारोबारियों के अनुसार कारीगरों के पलायन के दौरान सालान कारोबार घटकर 100 करोड़ तक आ गया था लेकिन बीते पांच साल से वृद्धि हुई है। अब अन्य राज्यों से माल का आर्डर मिलने से बरेली में 700 करोड़ रुपये से ज्यादा के कारोबार का टर्नओवर है।

"जरी जरदोजी के लिए बरेली प्रसिद्ध हैं, कुछ साल पहले वित्तीय कारणों से बड़ी संख्या में कारीगर पलायन कर गए थे, लेकिन अब सुधार होने पर कारोबार के दिन बहुरने लगे हैं।

- सैय्यद मोहसीन आलम
जरी कारोबारी

"आर्डर लेकर कच्चे माल पर जरी जरदोजी की जाती है। साड़ी और सूट के साथ अब पशमीना पर भी जरी की कढ़ाई हो रही है। जिसकी मांग युवा वर्ग में काफी अधिक है।

- हैदर अली, जरी कारोबारी

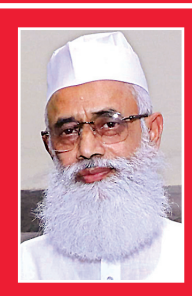

"कभी बरेली को जरी नगरी कहा जाता था, शहर से लेकर देहात तक बड़ी संख्या में कारीगर फैले हैं। उनकी मेहनत को विदेशों में पहचान मिल रही है। अरब में बरेली की जरी जरदोजी से तैयार कपड़ों की मांग है।

- हाजी महबूब अली
जरी कारोबारी

लेखक
अंकित चौहान
बरेली

आल्हा-ऊदल की वीर गाथा , भाई-बहन के प्रेम का उत्सव

आल्हा-ऊदल की वीरता का प्रतीक बीते 843 वर्षों से रक्षाबंधन के अगले दिन से महोबा में लगने वाला कजली मेला भव्य शोभायात्रा के साथ शुरू हो गया। कीरत सागर के पास दो किलोमीटर के दायरे में आयोजित होने वाले इस मेले में बुंदेली लोक विधाओं से जुड़े सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं। इसे उत्तर भारत का सबसे प्राचीन मेला माना जाता है। इस बार हवेली दरवाजे से निकली शोभायात्रा में हाथी पर सवार आल्हा, घोड़े पर बैठे ऊदल और वीर गाथाओं से सजी झांकियां शामिल रहीं। शोभा यात्रा में एक सौ घोड़े नृत्य करते हुए चल रहे थे। यह मेला सांप्रदायिक सौहार्द का प्रतीक है, जहां हर धर्म और समुदाय के लोग कजलियों को सम्मानपूर्वक विसर्जित करते हैं। 15 दिन तक चलने वाले इस मेले में उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश के अलावा अन्य राज्यों से भी लोग शामिल होते हैं। कीरत सागर तट पर बनाए गए आल्हा मंच पर बुंदेली कलाकारों ने नृत्य के साथ बुंदेली गीत-संगीत की धूम मचाई, तो आल्हा गायन ने महफिल में जोश भर दिया। मेले में आज भी सैकड़ों साल पुराने आल्हा गायन और आल्हा सुनने की परम्परा कायम है।

दो दिन में बिक गए 10 हजार लाठी-डंडे

मेले में शुरू के दो दिनों में ही 10 हजार से अधिक लाठी-डंडों की बिक्री हो चुकी है। लाठी खरीदने के लिए ग्रामीण साल भर कजली मेले का इंतजार करते हैं। कजली मेले में इस बार आए नई तरह की रेलगाड़ी और डांसिंग झूले का बच्चे आनंद ले रहे हैं।

844 साल पुराने महोबा के कजली मेला में बुंदेली संस्कृति की धूम

पिया मेहंदी लिया दे...

सांस्कृतिक मंच पर संगीता तिवारी ने जहां पारंपरिक लोकगीतों की मधुर प्रस्तुति दी, वहीं उमाशंकर सेन और बृजेंद्र कुमार के आल्हा गायन ने वीरता की झलक दिखाई। संगीताचार्य अबोध सोनी और उनकी टीम ने स्वागत गीत से महफिल में चार चांद लगाए। मुख्य आकर्षण लखनऊ की टीम ज्ञानेश्वर ज्ञानी द्वारा प्रस्तुत नाट्य कृति 'मन मन में राम' रही।

लेखक: *नईमुर्रहमान, महोबा*

नक्कारखाने की तूती न बन जाए साज और आवाज की गजब शान

शास्त्रीय और सुगम संगीत के साथ लोक गायकी व नृत्य कला में किया जाता नगाड़ा का इस्तेमाल

नगाड़ा और नक्कारा दोनों ही पारंपरिक भारतीय ढोल वाद्य यंत्र हैं, लेकिन इनके इस्तेमाल, आकार और उत्पत्ति में थोड़ा अंतर है। नगाड़ा काफी कुछ ढोल जैसा होता है। इसे 'दुन्दुभि' भी कहा जाता है। नगाड़ा सामान्यतया जोड़े में लकड़ी की छड़ियों से बजाया जाता है। इसे नौबत (नौ पारंपरिक वाद्य यंत्रों का समूह) का हिस्सा माना जाता है। नगाड़ा आमतौर पर कांसे या मिट्टी से बना और चमड़े से मढ़ा होता है। इसे पहले शाही दरबार और युद्धों में बजाया जाता था। अब धार्मिक जुलूसों तथा अनुष्ठानों में बजाया जाता है। इसकी आवाज भारी होती है, और दूर तक जाती है। नगाड़ा का उपयोग शहनाई और अन्य वाद्य यंत्रों के साथ संगत में लय प्रदान करने के लिए भी किया जाता है। के मुकाबले नक्कारा एक छोटा ढोल है। यह तांबे या पीतल से बना तथा चमड़े से मढ़ा होता है। इसका उपयोग मुख्य रूप से लोक नृत्य और कलाओं के अतिरिक्त त्योहारों व धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है। इसकी ध्वनि नगाड़े से थोड़ी हल्की होती है। नौटंकी कला में नक्कारा वाद्य यंत्र का नृत्य के साथ जमकर प्रयोग किया जाता है।

शहनाई व सुरनाई के साथ संगीत को लय देता नगाड़ा

- पारंपरिक भारतीय ताल वाद्य नगाड़ा को नक्कारा या नगारा भी कहा जाता है। इसे आमतौर पर शहनाई, सुरनाई, या नफीरी जैसे वाद्य यंत्रों के साथ खूब बजाया जाता है। विशेष रूप से शहनाई के साथ शादियों और समारोहों का यह लंबे समय तक अभिन्न अंग रहा है। लेकिन नगाड़ा का ज्यादा उपयोग धार्मिक जुलूसों, युद्ध के मैदानों में और यहां तक कि ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण घोषणाओं के लिए भी किया जाता रहा है। नगाड़ा को डंडों से बजाया जाता है। इसका उपयोग न केवल संगीत में लय प्रदान करने के लिए किया जाता है, बल्कि संदेश फैलाने और गर्व की भावना जगाने के लिए भी किया जाता था।

देश भर में कला-संस्कृति के उत्सव पर कृष्ण भक्ति का रंग

भगवान श्रीकृष्ण की कथा से कला के विभिन्न आयाम जुड़े हैं। ऐसे में जन्माष्टमी से पहले देश भर में कला-संस्कृति के उत्सव पर कृष्ण भक्ति का रंग चढ़ चुका है। श्रीराम भारतीय कला केंद्र द्वारा नई दिल्ली के मंडी हाऊस स्थित कमानी सभागार में महाविष्णु के पूर्णावतार की गाथा को नृत्य नाटिका के तौर पर प्रस्तुत किया जा रहा है। केंद्र की यह प्रस्तुति प्रदर्शन से ज्यादा विरासत बन चुकी है। भगवान कृष्ण के जीवन पर आधारित 'कृष्ण' नृत्य नाटिका की इस वर्ष 49वीं प्रस्तुति दी जा रही है। इसमें शास्त्रीय और लोक नृत्य शैलियों का सुंदर संगम नजर आता है। पारंपरिक परिधान, आभूषण, संगीत और प्रतीकात्मक दृश्य इसे एक संपूर्ण सांस्कृतिक और धार्मिक अनुभव बना देते हैं। नृत्य नाटिका 'कृष्ण' में श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर अलौकिक प्रस्थान तक की जीवन यात्रा को पौराणिक कथा, संगीत और नृत्य के माध्यम से आध्यात्मिक एवं कलात्मक शैली में प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय और लोकनृत्य शैलियों जैसे मयूरभंज छऊ और कलारीपायट्टु के संगम से बनी इस नृत्य नाटिका में पारंपरिक वेशभूषा, आभूषण, प्रतीकात्मक एनीमेशन और शास्त्रीय संगीत एवं क्षेत्रीय रचनाओं से सजे संगीत ने ऐसा समृद्ध बनाया है कि दर्शक मंत्रमुग्ध होकर आनंद उठा रहे हैं।